चूँकि इस किताब में न्याय की दृष्टि से किसी हद तक सनातन धर्म की मदद है इस लिए इस का नाम

सनातन धर्म

रखा गया।

रचित

युगावतार हज़रत मसीह मौऊद व महदी मस्ऊद

अलैहिस्सलाम मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद साहब

क़ादियानी

8 मार्च सन् 1903 ई.

سناتن دھرم

पुस्तक का नाम	सनातन धर्म
लेखक	हज़रत मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी मसीह मौऊद व महदी मअहूद
अनुवादक	अलीहसन एम.ए.एच.ए
संख्या	1000
प्रथम संस्करण, हिन्दी	अप्रैल 2011 ई.
प्रकाशक	नज़ारत नश्रो इशाअत, क़ादियान-143516
प्रैस	फ़ज़्ले उमर प्रिंटिंग प्रेस, क़ादियान

Name of Book	***Sanatan Dharam***
By	*Hazrat Mirza Ghulam Ahmad Qadiani* *The Promised Massih & Mahadi a.s*
Translated By	*Ali Hasan M.A.H.A*
Copies	**1000**
1st Edition Hindi	*April 2011.*
Published By	*Nazarat Nashro Ishat* *Qadian-143516, INDIA*
Printed at	*Fazle Umar Printing Press Qadian*
ISBN	**978-81-7912-315-7**

چونکہ اس رسالہ میں انصاف کی رو سے کسی قدر

سناتن دھرم کی مدد ہے اس لئے

اس کا نام

سناتن دھرم

رکھا گیا

تصنیف لطیف حضرت مسیح موعود و مہدی مسعود امام الوقت

علیہ السلام میرزا غلام احمد صاحب قادیانی سلمہ اللہ الرحمان

۸ مارچ ۱۹۰۳ء

مطبع ضیاء الاسلام قادیان دارالامان میں باہتمام حافظ

حکیم فضل الدین صاحب کے چھپ کر شائع ہوا

تعداد اشاعت ۷۰۰

بار اوّل

प्राक्कथन

यह पुस्तक युगावतार हज़रत मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद साहब क़ादियानी मसीह मौऊद व महदी मस्ऊद अलैहिस्सलाम ने सन् 1903 ई. में उर्दू भाषा में लिखी। इसमें आपने आर्य समाज में पाई जाने वाली कलियुग की उन निकृष्ट आस्थाओं का खण्डन किया है जो एक सभ्य समाज के लिए कलंक हैं। आपने सनातन धर्म की उन आस्थाओं की जो मानवीय प्रकृति के अनुकूल हैं प्रशंसा की, और स्पष्ट किया कि इस्लाम भी उनका समर्थन करता है। आपने फ़रमाया कि हज़रत ईसा मसीह, राजा रामचन्द्र, और राजा कृष्ण इत्यादि वस्तुतः परमेश्वर नहीं थे, बल्कि वे प्रतिष्ठित ईशभक्त और अवतार थे। इसके अतिरिक्त सच्चे धर्म को परखने के लिए आपने तीन प्रकार बयान किये।

इसका हिन्दी अनुवाद अलीहसन एम.ए.एच.ए ने किया है। मैं आशा करता हूँ कि यह अनुवाद हिन्दी भाषियों के लिए अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होगा। अल्लाह से दुआ है कि वह ऐसा ही करे। तथास्तु

भवदीय

नाज़िर नश्रो इशाअत

ग़ज़ल

ऐ आर्य: समाज फँसो मत अज़ाब में
क्यों मुब्तिला हो यारो ख़याले ख़राब में

ऐ क़ौम आर्य: तेरे दिल को यह क्या हुआ
तू जागती है या तेरी बातें हैं ख़्वाब में

क्या वह ख़ुदा जो है तेरी जाँ का ख़ुदा नहीं
ईमाँ की बू नहीं तेरे ऐसे जवाब में

गर आशिकों की रूह नहीं उसके हाथ से
फिर ग़ैर के लिए हैं वे क्यों इज़्तिराब में

गर वह अलग है ऐसा कि छू भी नहीं गया
फिर किसने लिख दिया है वह दिल की किताब में

जिस सोज़ में हैं उसके लिए आशिकों के दिल
इतना तो हमने सोज़ न देखा कबाब में

जामे विसाल देता है उसको जो मर चुका
कुछ भी नहीं है फ़र्क़ यहाँ शेख़ो शाब में

मिलता है वह उसी को जो वह ख़ाक में मिला
ज़ाहिर की क़ीलोक़ाल भला किस हिसाब में

होता है वह उसी का जो उसका ही हो गया
है उसकी गोद में जो गिरा उस जनाब में

फूलों को जाके देखो उसी से वह आब है
चमके उसी का नूर मह-व-आफ़ताब[1] में

ख़ूबों के हुस्न में भी उसी का वह नूर है
क्या चीज़ हुस्न है वही चमका हिजाब में

उसकी तरफ़ है हाथ हर इक तारे ज़ुल्फ़ का
हिजराँ से उसके रहती है वह पेंचोताब में

हर चश्म मस्त देखो उसी को दिखाती है
हर दिल उसी के इश्क से है इत्तिहाब में

जिन मूर्खों को कामों पे उसके यक़ीं नहीं
पानी को ढूँढ़ते हैं अबस वे सराब में

क़ुदरत से उस क़दीर के इन्कार करते हैं
बकते हैं जैसे ग़र्क़ कोई हो शराब में

दिल में नहीं कि देखें वे उस पाक ज़ात को
डरते हैं क़ौम से कि न पकड़ें इताब में

हमको तू ऐ अज़ीज़ दिखा अपना वह जमाल
कब तक वह मुँह रहेगा हिजाबो नक़ाब में

---

1. اَللّٰہُ نُوْرُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ (النور آیت 36) खुदा धरती और आकाश का नूर है (क़ुरआन शरीफ़)

بِسۡمِ اللّٰہِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِیۡمِ

नियोग

यद्यापि मैंने किताब ''नसीम-ए-दावत'' में नियोग के बारे में जहाँ तक उचित था कुछ वर्णन किया है और मैं जानता हूँ कि वह एक सत्याभिलाषी के लिए बड़ी लाभदायक और काफ़ी है। लेकिन मैंने कतिपय लोगों की ज़ुबानी सुना है कि पंडित रामभजदत्त साहिब अध्यक्ष आर्य धर्म सभा पंजाब, आर्य समाज के क़ादियान जलसा में मेरी किताब नसीम-ए-दावत पहुँचने के बाद अपने अन्तिम भाषण में मेरा वर्णन करके कहते थे कि अगर वह मुझ से इस बारे में बातचीत करते तो जो कुछ नियोग कराने के फ़ायदे हैं मैं सब उनके पास बयान करता।

इसलिए शिष्टतापूर्वक निवेदन है कि मैंने जहाँ तक मनुष्य के स्वाभिमान और उसके पवित्र अन्तर्विवेक का तक़ाज़ा है वह नेक नीयती से अपनी किताब नसीम-ए-दावत में बयान दिया है। मेरा तात्पर्य उससे कोई बहस-मुबाहसा नहीं था बल्कि केवल हमदर्दी की राह से एक नसीहत थी। मैं इस बात में अकेला नहीं बल्कि हज़ारों सज्जन हिन्दू और खालसा पंथ के अनुयायी सज्जन सिक्ख इस बात को कदापि उचित (जाइज़) नहीं समझते कि एक पतिव्रता और कुलीन स्त्री केवल सन्तान के लालच से परपुरुष से संबंध स्थापित करे और पति जीवित मौजूद हो।

रहे नियोग के फ़ायदे और संभवत: पंडित साहिब का फायदों से तात्पर्य नियोग की संतानें होंगी जो मुफ़्त में ग्यारह लड़के पैदा हो जाते हैं और इस तरह पर सन्तान बढ़ती है। लेकिन पंडित साहिब नाराज़ न हों ऐसी सन्तान तो कुलीन(सज्जन) व्यक्ति के लिए एक धब्बा है न कि गर्व का कारण। मेरे

निकट एक पतिव्रता स्त्री अगर सारी उम्र नि:सन्तान रहे तो नि:सन्तान मरना इससे बेहतर है कि दूसरे से संबंध स्थापित करके ऐसी सन्तान प्राप्त करे कि जो बुद्धि के अनुसार अवैध संतान (जारज) कहलावे। और यदि सच्चाई कोई चीज़ है तो फिर क्या कारण है कि बच्चों को उस अभागे भार्याट (भड़ुवा) की सन्तान समझी जाय जिसके वीर्य से वे बच्चे नहीं हैं। बल्कि वे तो उन लोगों के बच्चे हैं जिसका वे वीर्य हैं। काश अगर ऐसी स्त्री ऐसी सन्तान प्राप्त करने से पहले ही मर जाय तो अच्छा है। पंडित रामभजदत्त साहिब को इस लज्जाजनक नियोग के विषय में बहुत हठ नहीं करनी चाहिए। चूँकि यह मसला (विषय) इन्सानी शर्म के विपरीत है इसलिए उचित है कि इस मसले को आर्य समाज के मसलों में से काट दिया जाय और साधारण विज्ञापन दिया जाय कि दयानन्द ने सारी उम्र कुँवारा जीवन व्यतीत करने और उस ग़ैरत (स्वाभिमान) को न महसूस करने के कारण कि जो गृहस्थ जीवन की हालत में प्रत्येक सभ्य (सज्जन) पुरूष को अपनी धर्म पत्नी के संबंध में होता है बहुत बड़ी ग़ल्ती खायी। इसलिए आर्य समाज अपने सिद्धान्तों से इसको अलग करता है। और इस पर बहुत से सज्जनों के हस्ताक्षर हो जाने चाहिए ताकि फिर किसी आपत्तिकर्ता को आपत्ति करने की जगह न मिले। अन्यथा याद रखें कि नियोग का सिद्धान्त उनके धर्म के लिए एक रोग है। और मैं मान नहीं सकता कि पतिव्रता स्त्रियाँ नियोग के लिए तैयार हो जायेंगी। बल्कि मुझे तो यह अन्देशा है कि इस पर ज़ोर देने से कोई स्त्री ज़हर खाकर मर न जाय[1]। हे साहिबान और तो हुआ जो हुआ, इस रोग को तो अपनी क़ौम से जल्द दूर करो और जानबूझ कर उसको वेद के ज़िम्मे मत लगाओ। यह उम्मीद मत रखो कि आर्य वर्त के सभ्य पुरूष और सभ्य स्त्रियाँ इसको स्वीकार कर लेंगे,

---

1 आर्य वर्त की स्त्रियों को अभी तक अपने पतियों से ऐसा सच्चा प्यार रहा है कि वे उनके लिए सती होती रही हैं। लेकिन ऐसी स्त्री कि पति सिर पर मौजूद है और वह दूसरों से यौन संबंध बनाती फिरती है किस प्रकान वैसा प्यार पति से कर सकती है।

बल्कि मुझे ज्ञात होता है कि हिन्दू धर्म में दत्तक पुत्र की रस्मोरिवाज नियोग के कारण से ही पैदा हुई है अर्थात जब सभ्य पुरूषों और स्त्रियों ने देखा कि यह (नियोग–अनुवादक) गन्दी रस्म है तो उसकी जगह दत्तक पुत्र लेने की रस्म प्रारंभ कर दी। और पुरूषों की सज्जनता ने न चाहा कि इस लज्जाजनक रस्म अर्थात नियोग पर अपनी स्त्रियों से पालन करावें। इस लिए उन्होंने इस बात को पसन्द कर लिया कि सन्तान गोद ले लें। यद्यपि दत्तक पुत्र बनाना भी एक बनावट है मगर फिर भी इस निर्लज्ज और गन्दी रस्म से तो हज़ारों गुना अच्छी है। यह तो ऐसी गन्दी रस्म है कि अगर किसी चूड़े या चमार (अर्थात अत्यधिक नीच–अनुवादक) को भी कहा जाय कि अपनी औरतों से ऐसा करावे तो वह भी मरने मारने को तैयार हो जावेगा। अतः हमें आर्य साहिबों पर क्यों अफ़सोस न हो कि उन्होंने आँख बन्द करके दयानन्द की बातें स्वीकार कर लीं। आख़िर सनातन धर्म वाले भी क़ौम की दृष्टि से उनके भाई थे क्या पुरातन से वे वेद नहीं पढ़ते थे फिर क्यों वे इस लज्जाजनक रस्म को पसन्द नहीं करते। अफ़सोस तो यह है कि जब भलाई की दृष्टि से आर्य साहिबों को कहा जाय कि आप लोग इस रस्म को छोड़ दें और ऐसे दुष्कर्म अपनी स्त्रियों से मर करावें तो वे उल्टे ग़ुस्सा करने लगते हैं। अजीब हालत आर्य समाज वालों की है कि उनको इस काम में कुछ भी शर्म नहीं आती। गत दिनों मैंने कुछ आर्यों को अपने मकान पर बुलाया था उनमें से एक आर्य कृष्ण सिंह नामक भी था जो बाबा नानक साहिब की अनुसरण (पैरवी) से नाराज़ हो कर अब आर्य बना हुआ है और ऐसे व्यक्ति को छोड़कर जो अध्यात्म और शुद्धता अपने अन्दर रखता था और अपने करतार (अर्थात ख़ुदा) की मुहब्बत से उसका दिल भरा हुआ था, पंडित दयानन्द का हर पल जप करना शुरू कर दिया है उसके साथ लाला शर्मपत और लाला मलावामल क़ादियान, भी थे और पंडित सोमराज सेक्रेटरी आर्य समाज क़ादियान भी साथ थे और कुछ सनातन धर्म के हिन्दू भी थे। तब हमने उन लोगों को बहुत समझाया कि ऐसे काम अपनी स्त्रियों से कराने उचित नहीं विशेषकर इस गाँव में, तब

उस समय सब चुप रहे और सब को शर्म लगी मगर पंडित सोमराज बोल उठे कि इस काम में कुछ हर्ज नहीं। तब सनातन धर्म वाले जो मौजूद थे इस बात को सुनकर कि इस व्यक्ति ने एक भरी सभा में अपनी स्त्री के बारे में ऐसा व्यभिचार वैध रखा और लज्जा से कुछ काम न लिया, सब ने तुरन्त राम राम कहना शुरू कर दिया और शेष आर्य साहिबान अपनी चादरों में अपना मुँह छुपाकर हँसने लगे और उस समय तीस व्यक्ति के लगभग साक्षी होंगे जब उस पंडित ने यह लज्जाजनक बात अपने मुँह से कही।

बड़ा अफ़सोस है कि आर्य साहिबान यह तो नहीं करते कि इस रस्म को दूर कर दें बल्कि उल्टे ग़ुस्से में आकर कहते हैं कि क्या मुसलमान मुत्अः नहीं करते अर्थात विवाहित स्त्रियों को तलाक़ नहीं देते। बहुतेरा समझाया गया कि हे साहिबो कहाँ तलाक़ देना जो ज़रूरतों के समय तमाम् दुनिया में जारी है और कहाँ यह काम कि एक मर्द जीवित मौजूद होते हुए अपनी स्त्री से ऐसा काम करावे, मगर ये लोग नहीं समझते। सनातन धर्म के लोग कि जो लज्जावान् और स्वाभिमानी हैं वे शर्म से मरे जाते हैं, गुनाह इनका और शर्मिन्दगी उनको। बार-बार कहा गया कि अगर एक व्यक्ति जो विवाह करके किसी समय स्त्री को तलाक़ दे देता है और या तलाक़ का समय निर्धारित कर देता है कि इतनी अवधि के बाद मैं तलाक़ दे दूँगा, जिसका नाम कतिपय शिया लोगों के निकट मुत्अः है। इस विवाह को आप लोगों की रस्म से कोई तुलना नहीं और ऐसा विवाह भी, जिसके तलाक़ की अवधि पूर्व से निर्धारित की जाय, हमारे धर्म में मना है। क़ुरआन शरीफ़ स्पष्ट तौर पर इसको अवैध फ़रमाता है। अरब के लोगों में इस्लाम से पूर्व एक समय तक ऐसे विवाह होते थे, क़ुरआन शरीफ़ ने रोक दिया और क़ुरआन शरीफ़ के अवतरित होने से वे निषेध ठहर गये। केवल कुछ शियों के फ़िर्क़े इसके पाबन्द हैं मगर वे जाहिलियत (मूर्खता) की रस्म में गिरफ़्तार हैं। किसी बुद्धिमान के लिए उचित नहीं कि अपनी ग़ल्ती को छुपाने के लिए किसी दूसरे की ग़ल्ती का उद्धरण प्रस्तुत करें। क्या एक अपराधी किसी दूसरे अपराधी के उद्धरण देने

से रिहाई पा सकता है ? ख़ुदा की किताब (क़ुरआन शरीफ़) में विवाह करने के बारे में विस्तार पूर्वक निर्देश मौजूद है। उसमें ऐसे विवाह का वर्णन नहीं, जिसमें बयान किया जाता है कि इतनी अवधि के पश्चात् मैं तलाक़ दे दूँगा। इसके अतिरिक्त इस दशा में असल एतराज़ तो तलाक़ पर हुआ और संसार में कोई सम्प्रदाय नहीं जो तलाक़ का मुख़ालिफ़ हो, किसी न किसी ज़रूरत से किसी समय तलाक़ देनी पड़ती है। अतः जब आर्य साहिबों को ऐसे लज्जाजनक काम से मना किया जाता है तो खिसियाने बनकर यही जवाब देते हैं कि मुसलमानों में भी तो तलाक़ की रस्म है। हे साहिबो यह रस्म किस धर्म में नहीं, जब पति-पत्नी में घोर मुख़ालिफ़त (लड़ाई) होगी तो तलाक़ के अतिरिक्त और क्या चारा होगा ? अच्छा है कि आप साहिबान ऐसी बातें न करें और नियोग को छोड़ दें। इन बातों से भी क्या फ़ायदा कि नियोग में बड़े फ़ायदे और बड़े भेद हैं। हे साहिबो अगर अधिक नहीं तो प्लेग के दिनों तक ही ऐसी रस्म से दूर हो जाओ, ऐसा न हो कि ऐसे कामों से और भी यह महामारी फैले। अफ़सोस कि इस नियोग की रस्म के बावजूद जिस से कि शर्मिन्दा होना चाहिए था आर्य साहिबों में बदज़बानी बहुत बढ़ गयी है। कई सज्जन आर्य, इस जलसा क़ादियान के आयोजन पर स्वयं आकर मुझ से मिले हैं और स्वयं उन्होंने स्वीकार किया है कि इस जलसा में बहुत सी गन्दाज़ुबानी से काम लिया गया है विशेषकर एक व्यक्ति का अक्सर आर्य साहिबों ने वर्णन किया कि वह तेज़ और गन्दाज़ुबान था।

अतः स्पष्ट हो कि धर्म इस बात का नाम नहीं कि बिना सोचे समझे एतराज़ कर देना और ठट्ठे से जलसे को रौनक़ देना और बहरूपियों की तरह हँसी करना, इस तरह पर कोई धर्म क़ाइम (स्थापित) नहीं हो सकता। नेक लोगों के लिए बेहतर तरीक़ा यह है कि किसी धर्म के प्रकाशित किए हुए सिद्धान्तों पर एतराज़ करें मगर किसी क़ौम की आसमानी किताब (अर्थात पवित्र ग्रन्थ) पर उस समय तक एतराज़ न करें जब तक कि उनको पूरी जानकारी और पूरे प्रमाणों से ज्ञान न हो। उदाहरणतः नियोग का मसला है

इसमें कोई सन्देह नहीं कि पति के जीवित होने के बावजूद उसकी पत्नी का दूसरे से व्यभिचार करवाना एक बार नहीं दो बार नहीं बल्कि बारह तेरह वर्ष तक जब तक ग्यारह बच्चे पैदा हो जायँ, मानवीय अन्तर्विवेक इस निर्लज्जता को स्वीकार नहीं करता और हर एक नेक प्रवृति इस रस्म से दूर भागती है। और वस्तुतः इससे बड़ी कोई निर्लज्जता नहीं, और कोई लज्जावान् व्यक्ति इसको पसन्द नहीं करेगा कि अपने जीते जी अपनी पत्नी की ये हालतें देखे। मगर हमारी जमाअत को जो तक़्वा (संयम) के लिए क़ाइम की गयी है अच्छी तरह याद रहे कि वे यह न समझ लें कि यह वेद की शिक्षा है। मेरी राय यही है कि यह वेद की कदापि शिक्षा नहीं मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि कभी एक श्रुति या एक आयत के बीस(20) अर्थ हो सकते हैं। अतः ऐसे अवसर पर एक गन्दा व्यक्ति गंदे अर्थ कर लेता है और पवित्र स्वभाव व्यक्ति पवित्र अर्थ करता है। कई आदमी इस प्रकार के भी होते हैं कि अपनी कुछ कामवासना से संबंध रखने वाली इच्छाओं की पूर्ति के लिए क़ौम में बद्चलनी फैलाना चाहते हैं। फिर वे बहाना ढूंढ़ने के लिए किसी ऐसी किताब में से जिसको क़ौम आसमानी (अर्थात ईश्वरीय) समझती है, कोई श्रुति या आयत प्रस्तुत कर देते हैं और इस तरह पर नादानों को हलाक (मलियामेट) कर देते हैं। अतः हमारी जमाअत को चाहिए कि इस प्रकार के तरीक़ों से दूर रहें क्योंकि ये तरीक़े बचाव और परहेज़गारी के उलट हैं। ऐसी साँझी बातें जो थोड़ी बहुत सारी क़ौमों में पाई जाती हैं उनको एतराज़ के तौर पर प्रस्तुत करना सरासर मूर्खता या ईर्ष्या द्वेष है, जिसको आर्य साहिबान दिखला रहे हैं उदाहरणतः एक से अधिक पत्नियाँ करना या आवश्यकता पड़ने पर तलाक़ देना या दूसरे ऐसे विषय जिनका साँझापन सब क़ौमों में पाया जाता है उनको एतराज़ के तौर पर प्रस्तुत करना किसी सज्जन आदमी का काम नहीं क्योंकि ये बातें हर एक क़ौम में पायी जाती हैं। मूलतः एतराज़ के योग्य दो बातें हैं **प्रथम** यह कि रूहें और शरीर अर्थात जीव और परमाणु ख़ुदा के पैदा किए हुए नहीं बल्कि ख़ुदा की तरह अपने अस्तित्व के स्वयं ख़ुदा हैं और अनादि (अर्थात सदैव

से) हैं। **दूसरी** यह लज्जाजनक रस्म है जिसका नाम नियोग है। अतएव यह एतराज़ वेद पर नहीं बल्कि पंडित दयानन्द पर है जिसने ऐसा धर्म फैलाया। हमारी जमाअत सावधान रहे कि जानबूझ कर एहतियात से बढ़कर कोई बात मुँह से न निकाले। यह सत्य है कि आर्य समाजियों में कटुभाषी बहुत लोग हैं जो एतराज़ करते समय यह नहीं देखते कि कहाँ तक हमें इस एतराज़ के बारे में जानकारी है बल्कि जो कुछ मुँह में आया कह देते हैं, उद्देश्य तो हँसी ठट्ठा है न कि जानकारी प्राप्त करना। कई सरसरी नज़र से ख़ुदा की किताब को देखकर बिना इसके कि पूरी समझ से काम लें, तुरन्त एतराज़ कर देते हैं। ख़ुदा की वाणी में कई जगह रूपक और कई जगह लाक्षणिक वर्णन होता है और कई जगह वास्तविकता का दिखलाना उद्देश्य होता है। अतएव जब पूरी जानकारी न हो और उसके साथ अपना हृदय स्वच्छ न हो तो एतराज़ करना मूर्खता है। ख़ुदा की वाणी के सही अर्थ समझने वाले वे लोग होते हैं जो ख़ुदा से मिलते हैं। एक व्यक्ति जो पूर्णत: दुनिया की गन्दगी में डूबा हुआ है और आँखें अन्धी और दिल गन्दा है वह इस हालत में ख़ुदा की वाणी पर क्या एतराज़ करेगा। पहले चाहिए कि अपने दिल को साफ करे और कामवासना संबंधी मनोभावों से अपने आप को दूर करे फिर एतराज़ करे उदाहरणस्वरूप क़ुरआन शरीफ़ में लिखा है:-

مَنۡ کَانَ فِیۡ هٰذِهٖۤ اَعۡمٰی فَهُوَ فِی الۡاٰخِرَةِ اَعۡمٰی (بنی اسرائیل آیت 73)

अर्थात जो इस लोक में अन्धा है वह दूसरे लोक में भी अन्धा ही होगा। अब एक ऐसा आपत्तिकर्ता जिसको ख़ुदा की वाणी का उद्देश्य ज्ञात नहीं, यह एतराज़ करेगा कि देखो मुसलमानों के धर्म में लिखा है कि अन्धों को मुक्ति नहीं। बेचारे अन्धे का क्या क़ुसूर है मगर जो द्वेष भावना को दूर करके ध्यानपूर्वक क़ुरआन शरीफ़ को पढ़ेगा वह समझ लेगा कि इस जगह पर आँखों के अन्धे तात्पर्य नहीं हैं बल्कि दिल के अन्धे हैं। तात्पर्य यह है कि जिनको इस लोक में ख़ुदा का दर्शन नहीं होता उन्हें दूसरे लोक में भी दर्शन नहीं होगा। इसी तरह सैंकड़ों ख़ुदा की वाणी में लाक्षणिक और रूपक

शब्द होते हैं। एक तामसिक आवेग वाला आदमी जल्दी से सबको एतराज़ की जगह बना देगा। मैं ख़ुदा की क़सम खाकर कहता हूँ कि यही सच बात है कि ख़ुदा की वाणी समझने के लिए पहले दिल को तामसिक आवेग से स्वच्छ करना चाहिए। तब ख़ुदा की ओर से दिल पर नूर (ब्रह्मज्ञान) उतरेगा, बिना अन्दरूनी नूर के असल वास्तविकता समझ नहीं आती जैसा कि अल्लाह तआला क़ुरआन शरीफ़ में फ़रमाता है لَا يَمَسُّهٗۤ اِلَّا الۡمُطَهَّرُوۡنَ(الواقعه آیت 80)۔ अर्थात यह पवित्र (ख़ुदा) की वाणी है जब तक कोई पवित्र न हो जाय वह उसके भेदों तक नहीं पहुँचेगा। मैं जवान था और अब बूढ़ा हो गया और यदि लोग चाहें तो गवाही दे सकते हैं कि मैं दुनियादारी के कामों में नहीं पड़ा और धार्मिक कामों में हमेशा मेरी दिलचस्पी रही। मैंने इस वाणी को जिसका नाम क़ुरआन है अत्यधिक पवित्र और रूहानी हिकमत (अध्यात्म युक्ति) से भरा हुआ पाया, न वह किसी इन्सान को ख़ुदा बनाता है और न रूहों और शरीरों को उसकी सृष्टि से बाहर रखकर उसकी तौहीन और निन्दा करता है और वह बरकत जिसके लिए धर्म स्वीकार किया जाता है उसको यह क़ुरआन अन्ततः इन्सान के दिल पर उतार देता है और ख़ुदा के फ़ज़्ल (कृपा) का उसको पात्र बना देता है फिर क्यों हम रोशनी (ज्ञान) पाकर पुनः अन्धकार में आवें और आँखें पाकर फिर अन्धे बन जावें।

और इस जगह मुझे सिर्फ़ सच्चाई के समर्थन से जो मेरा कर्तव्य है इतना और कहना पड़ा है कि सनातन धर्म वाले अपनी कुछ बातों को अलग करके आर्य समाजियों से हज़ारों गुना बेहतर हैं वे अपने परमेश्वर का इस तरह अपमान नहीं करते कि हम अनादि और आदि होने के कारण उसके हमतुल्य हैं। वे नियोग के लज्जाजनक मसले(विषय) को नहीं मानते। वे इस्लाम पर तुच्छ एतराज़ नहीं करते, क्योंकि वे जानते हैं कि इस्लाम की बातें सब कौमों में पायी जाती हैं। वे अक्सर मिलनसार हैं उनमें ख़तरनाक हँसी ठट्ठा और बदज़बानी नहीं है और उनके सम्मुख आर्य साहिबों को इस विचार से भी अपने मुँह अपनी बड़ाई नहीं करनी चाहिए कि हम मूर्तिपूजा नहीं करते,

अवतारों को नहीं मानते, क्योंकि सनातन धर्म के संन्यासी जो धर्म के उच्च स्थान पर होते हैं वे भी मूर्तिपूजा से विमुख होते हैं। रहा अवतारों का विषय तो संस्कृत में नबियों और रसूलों को अवतार कहते हैं जिनमें परमेश्वर का नूर (ब्रह्मज्ञान) उतरता है, इसलिए सनातन धर्म का असल मज़हब यह नहीं है कि अवतार की पूजा करनी चाहिए। हाँ उनको वे बहुत पवित्र समझते हैं और उनका सम्मान करते हैं और उनसे प्रेम करते हैं।[2] मगर मैंने आर्य समाज की कुछ पुस्तक़ों और अख़बारों में देखा है कि उनके कई दुष्ट लोगों ने अवतारों से ठट्ठा किया और अपमानजनक शब्द कहे हैं यह अच्छे आदमियों का काम नहीं। सत्य यही है कि **कई आर्य साहिबों की धृष्टता हद से बढ़ गई है**। यही धृष्टता इस बात पर इशारा करती है कि यह वह बूटी है जिसकी जड़ नहीं। रूहानियत (अध्यात्म) की ओर यह क़ौम आकर्षित नहीं। धर्म सिर्फ़ हँसी ठट्ठों और ज़ुबान की चालाकियों से प्राप्त नहीं होता। धर्म तो एक मौत चाहता है जिसके बात ज़िन्दा रूह ही जाती है। अफ़सोस कि आर्य साहिबों के कई बारूद स्वभाव (अर्थात तामसिक प्रवृत्ति) सदस्यों ने जलसा क़ादियान में, बिना इसके कि धर्म के विषय में कुछ भी ज्ञान हो, भाँड़ों की तरह इस्लाम को गालियाँ दीं।[3] अगर उसमें उनकी नीयत नेक होती तो मेरी तरफ़ लिखते

2 नेक लोगों से प्रेम करना ईमानदार का कर्तव्य है और सत्संग की अनिवार्य शर्त इस से पूरी होती है और सनातन धर्म वाले केवल पिछले अवतारों से ही मुहब्बत नहीं रखते बल्कि इस कलियुग के ज़माने में वे एक आख़िरी अवतार के भी प्रतीक्षक हैं जो धरती को पाप से मुक्त कर देगा। अत: आश्चर्य नहीं कि किसी समय ख़ुदा के निशानों को देख कर उनके सौभाग्यशाली ख़ुदा के इस आसमानी सिलसिला को स्वीकार कर लें। क्योंकि इन में ज़िद और हठधर्मी बहुत ही कम है।

3 इन लोगों ने न केवल इस्लाम पर बद्ज़ुबानी की बल्कि सनातन धर्म के पवित्र सिद्धान्तों की भी बहुत सी निन्दा की और सनातन धर्म के बेचारे हिन्दुओं का दिल दु:खाया। ईसाई धर्म पर भी अपनी आदत के अनुसार बेजा (अनुचित) तौर पर वार किया। हमला करते समय हद से

कि इस्लाम पर हमारा अमुक एतराज़ है तो यद्यपि मैं ऐसी मज्लिसों में हाज़िर नहीं हो सकता था फिर भी मैं उनकी शंकाओं का नर्मी और ज्वलंत तक़रीर (भाषण) से जवाब देकर उनकी संतुष्टि कर देता। मगर अब वे जैसे क़ादियान में आये थे वैसे ही वापस गए और गुस्ताख़ियों और बद्ज़ुबानियों का ढेर सिर पर ले गये। मगर फिर भी मैंने किताब ''नसीम दावत'' कुछ ही दिनों में लिखकर उनको आमन्त्रित किया। अगर उनमें से एक भी समझ जाय तो मुझे सवाब (सत्कर्म फल) मिलेगा।

समापन

मैं पुस्तक नसीम दावत में बयान कर चुका हूँ कि हर एक धर्म तीन प्रकार से परखा जाता है। **प्रथम** यह कि उसने ख़ुदा के बारे में क्या लिखा है। अतः अफ़सोस है कि आर्य समाज के सिद्धान्त परमेश्वर को समस्त मौजूद चीज़ों का मूल स्रोत नहीं ठहराते, बल्कि हर एक चीज़ को परमेश्वर की तरह आदि और अनादि और ख़ुद बख़ुद (स्वतः) मानते हैं और विश्वास रखते हैं कि न तो इन चीज़ों को परमेश्वर ने पैदा किया और न इनकी शक्तियों को। अतः स्पष्ट है कि आर्य समाज का परमेश्वर सचमुच परमेश्वर नहीं अन्यथा चाहिए था कि सब चीज़ों का आरम्भ उसी से होता, यह क्या हुआ कि वह परमेश्वर तो कहलावे और दूसरी चीज़ें ख़ुद बख़ुद (स्वतः) हों, जो चीज़ उसकी पैदा की हुई नहीं वह कैसे उसकी हो गयी, इस नाजाइज़ क़ब्ज़े का कोई आर्य साहिब कारण तो बतलावे? जिन चीज़ों को परमेश्वर ने पैदा ही नहीं किया उन पर शासन करना केवल अत्याचार है। अतः अगर आर्य समाज

गुज़र जाना यही शैतानी आदत है। यह तो सच है कि हज़रत ईसा ख़ुदा नहीं है मगर वह ख़ुदा का एक प्यारा नबी और रसूल तो था और यह तो सच है कि राजा रामचन्द्र और राजा कृष्ण वास्तव में परमेश्वर नहीं थे मगर इसमें क्या सन्देह है कि वे दोनों प्रतिष्ठित, ईश्वर भक्त और अवतार थे। ख़ुदा की नूरानी तजल्ली (ब्रह्मज्ञान)उन पर उतरी थी। इस लिए वे अवतार कहलाए।

वाले सनातन धर्म वालों पर मूर्तिपूजा का इल्ज़ाम लगाते हैं तो उनकी इस आस्था की दृष्टि से उन पर ज़्यादा बड़ा इल्ज़ाम है क्योंकि मूर्तिपूजक अपनी मूर्तियों और देवताओं को परमेश्वर और ख़ुद बख़ुद (स्वत:) नहीं समझते, सिर्फ़ यह आस्था रखते हैं कि उनके देवताओं और अवतारों को परमेश्वर ने बड़ी-बड़ी ताक़तें दे रखी हैं जिनके कारण वे लोगों की मनोकामना पूरी करते हैं। हालाँकि यह बात ग़लत है बल्कि मनोकामनायें पूरी करने वाला सिर्फ़ एक है अर्थात ख़ुदा, जिसको परमेश्वर कहते हैं और लोक एवं परलोक में वही व्यक्ति सम्मान पाता है और उसी को बरकत दी जाती है जो सब को छोड़ कर सच्चे दिल से अपने ख़ुदा का फरमांबर्दार (आज्ञापालक) हो जाता है हर एक समय उस पवित्र परमेश्वर से यह आवाज़ आती है कि, **जे तू मेरा हो रहे सब जग तेरा हो।** और यही हमने आज़माया और हम इसके गवाह हैं। जो व्यक्ति उसकी मुहब्बत में डूब जाता है उसके प्रेम की ज्वाला में जलकर एक नया जन्म लेता है। अत: जब वह उस आग में दाख़िल हो जाता है तो धरती और आसमान की तमाम् चीज़ें जिनकी दूसरे लोग पूजा करते हैं उसके सेवक और दास बन जाती हैं। अत: सनातन धर्म वालों की यह ग़ल्ती है कि अपने जैसी चीज़ों से मुरादें मांगते हैं और वह ज़िन्दा और प्रकाशमान नूर (अर्थात ख़ुदा) जो उनके सामने है और दूर नहीं है बल्कि स्वगढ़ित पत्थरों की अपेक्षा बहुत निकट है उससे फ़ायदा नहीं उठाते, मगर फिर भी वे मानते हैं कि हर एक चीज़ परमेश्वर से निकली है उसके बिना कोई चीज़ ख़ुद बख़ुद (स्वत:) नहीं। प्रतीत होता है कि यही वेद की शिक्षा होगी जिसको सनातन धर्म वाले अब तक भूले नहीं। हमें उन ऋषियों मुनियों की उन श्रुतियों को देखने से जिन्होंने वनों में जाकर बड़ी-बड़ी तपस्यायें की थीं यह अनुमान ज्ञात होता है कि वेद की असल वास्तविकता उन्हीं पर खुली थी। इसलिए वे आर्य समाजियों की तरह जीव और परमाणु को अनादि और ख़ुद बख़ुद(स्वत:) जन्मा नहीं समझते थे। बल्कि जैसा कि उनके लेखों से स्पष्ट होता है कि उनका यही विश्वास था कि हर एक चीज़ परमेश्वर से निकली है अर्थात

उसकी वाणियाँ हैं। यही धर्म **इस्लाम** का है। (सौ बुद्धिमानों का एक ही मत होता है मगर मूर्ख अपनी अलग ही अलापता है)

वे लोग आर्य साहिबों की तरह सिर्फ़ ज़ुबान की चालाकी पर धर्म का आधार नहीं रखते थे बल्कि तपस्या से मेहनत से जप से तप से सच्चे दिल के साथ अपने परमेश्वर को ढूंढ़ते थे और वनों में जाकर कठिन तपस्या से बड़ी-बड़ी मेहनतें करते थे और उपवासों से अपने शरीरों को सुखा देते थे और एकान्तवास की अवस्था में अपने परमेश्वर से दिल लगाते थे तब वह आदि और अनादि नूर (प्रकाश) जिसका नाम विभिन्न भाषाओं में परमेश्वर, गॉड, ख़ुदा , अल्लाह है, उन पर प्रकट होता था। वे कदापि इस बात के क़ाइल (स्वीकारी) न थे कि ख़ुदा का इल्हाम और वह्यी (ईशवाणी) वेद तक ही सीमित है और आगे हमेशा के लिए इन्सान पर ख़ुदा के संवाद करने के दरवाज़े बन्द हो गये और ताले लग गये। बल्कि ख़ुदा उनसे बातें करता था और ग़ैब (परोक्ष) की बातें उन पर प्रकट होती थीं। सच तो यही है कि ख़ुदा का ढूंढ़ने वाले जो उसकी राह में मर रहे हैं और उसके लिए सब कुछ त्याग देते हैं,अगर ख़ुदा उनसे ऐसी ख़ुश्की (रूखापन) और लापरवाही करे और अपने आपको उन पर प्रकट न करे और छुपा रहे और आवाज़ तक सुनाई न दे तो वे जीते ही मर जायँ और दुनिया में कोई भी उन जैसा अभागा न हो, कि दुनिया छोड़ी परमेश्वर के लिए मगर वह भी न मिला दोनों लोक हाथ से गये। मगर क्या कोई मित्र अपने मित्र से ऐसा कर सकता है कदापि नहीं। कहावत मशहूर है कि दोस्ती में दो सती हों। एक व्यक्ति लाक्षणिक प्रेम में गिरफ़्तार होता है और एक लम्बे समय तक दर्द और करूणा के साथ दिन-रात अपने प्रियतम को अन्दर ही अन्दर अपनी ओर खींचता है फिर अचानक प्रेम की एक चिनगारी उसके प्रेमी के दिल पर जो अभी ग़ाफ़िल और बेख़बर था गिरती है लेकिन शर्त यह है कि यह प्रेम किसी स्वार्थ परायणता पर आधारित न हो। तब वह प्रियतम भी उसके दर्द से एक हिस्सा ले लेता है मानों उस प्रेमी के दिन-रात की दर्दें और आहें उस प्रियतम पर जादू का काम करती हैं। तब

उसका दिल उसकी ओर खिंचा जाता है और अज्ञात कारणों से उसके दिल में यह बात पड़ जाती है कि यह व्यक्ति मुझ से प्यार करता है, और केवल दिल में ही नहीं पड़ती बल्कि अन्ततः उसका गिरफ़्तार हो जाता है और दिल, दिल से मिल जाता है मानों वे दोनों एक ही हो जाते हैं और बड़ी विचित्र बात यह है कि एक प्रेमी चाहे हज़ार पर्दों में अपनी मुहब्बत छुपावे अवश्य उसके प्रियतम को उस मुहब्बत की ख़बर हो जाती है। और फिर दुनिया भी जो हर एक के पीछे जासूस की तरह लगी हुई है समझ जाती है कि इन दोनों की आपस में मुहब्बत है। और फिर वह मुहब्बत अगर वास्तव में पाक मुहब्बत है और स्वार्थ की कोई गन्दी कमीनगी उसके अन्दर नहीं, उस स्थान तक उन दोनों वजूदों को पहुँचाना चाहती है जहाँ कि एक दूसरे का दिल परस्पर खिंचा जाता है और बिना देखे चैन नहीं पड़ता है और उनको कुछ समझ नहीं आता कि यह आकर्षण कहाँ से और कैसे पैदा हो गया। अन्ततः उनके पाक दिल इतना अवश्य आनन्द उठाना चाहते हैं कि एक दूसरे से कुछ बातें किया करें, एक नज़र देख लें। कम से कम एक बात करने के लिए उनका दिल तड़पता है चाहे पीछे से मर जायें। यह तो भौतिक प्रेम का परिणाम है कि उसके चरमोत्कर्ष से परस्पर संवाद संभव है। अतः धिक्कार है ऐसे धर्म पर कि जो परमेश्वर के प्रेमी को इतना अंश देने का भी वादा नहीं करता कि वह उससे वार्तालाप कर सके जैसे कि एक इन्सान का प्रेमी अपने प्रियतम से वार्तालाप का सौभाग्य पा जाता है। अफ़सोस कि ये लोग तो ऐसा विश्वास ही नहीं रखते। मगर हम नहीं मान सकते कि वेद इन्सान को इस वार्तालाप के मर्तबा से वंचित रखना चाहता है। बल्कि ये उन लोगों की अपनी ग़ल्तियाँ हैं वेद का कसूर नहीं। मैं सच-सच कहता हूँ कि धर्म, वही धर्म है जो ख़ुदा को मिला दे और परस्पर संवाद का स्वाद चखा दे, अन्यथा एक गोबर में हाथ डालना है जिसमें गन्दगी के अतिरिक्त और कुछ नहीं।

दूसरा तरीक़ा धर्म के परखने का यह है कि सच्चा धर्म जिस तरह ख़ुदा से सम्बन्ध कराता है उसी तरह लोगों में पवित्रता फैलाता है। हम लिख चुके

हैं कि आर्य समाज ख़ुदा से संबंध नहीं कराता बल्कि उस जन्मसिद्ध संबंध का भी इन्कार करता है जो कि सृष्टि होने के कारण हर एक रूह (आत्मा) को अपने परमेश्वर से है और पवित्रता का नमूना नियोग की शिक्षा से स्पष्ट है। शाबाश हे सनातन धर्म, कि तूने न तो हर एक कण और हर एक जीव को अपने अस्तित्व का उन्हीं को परमेश्वर समझा और न तूने नियोग की गन्दगी को अपनी आस्था में शामिल किया। अतः मैं सच-सच कहता हूँ कि अगर तू इतना और आगे क़दम बढ़ावे कि ईश्वर भक्त सन्यासियों की तरह हो जाए जो परमेश्वर की मुहब्बत से भरे होते हैं और ऐसा उससे निकट हो जाए कि मूर्तिपूजा को भी अपने दामन से फेंक दे, तो फिर आर्यों के विपरीत तेरी हर मैदान में सफलता है वे एक राह से तेरे मुक़ाबला पर आयेंगे और सात राह से भागेंगे और यह नई बात नहीं। पुरातन से संन्यासियों का जो मुहब्बत की आग में भस्म हो जाते हैं, यही धर्म है कि परमेश्वर के अतिरिक्त सब व्यर्थ है।

तीसरा तरीक़ा सच्चे धर्म के परखने का यह है कि वह कहाँ तक संसार की गन्दगी से छुड़ाता और ख़ुदा तक पहुँचाता और उस पवित्र सत्ता को दिखलाता है। अतः आर्य धर्म इस मर्तबा से पूर्णतः महरूम (असफल) है। इसलिए उनके हिस्से में गालियों, बदज़ुबानियों और अनादर के अतिरिक्त और कुछ नहीं और स्वयं उनका सिद्धान्त न परमेश्वर के बारे में पवित्र और न लोगों की पवित्रता के संबंध में पवित्र है और न उनमें उन बरकतों का कुछ अंश है जो ईश्वरभक्तों को मिलती हैं। मैंने सुना है कि क़ादियान के सनातन धर्म के लोग आर्य समाज के उन दो सिद्धान्तों के रद्द और खण्डन के लिए जो वे लोग परमेश्वर के शक्तिहीन होने और नियोग के बारे में रखते हैं, कोई जलसा (समारोह) करना चाहते हैं। मेरे निकट उचित है कि दूसरे शहरों के सनातन धर्म के लोग उनकी सहायता करें और यदि हमने मौजूदा हालत के दृष्टिकोण से उचित समझा तो हम भी उनकी सहायता करेंगे। वस्सलाम

ख़ाकसार

मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी